राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर

एकल पीठ सिविल रिट याचिका संख्या 6869/2007

संजय दाधीच पुत्र श्री सत्यनारायण दाधीच, उम्र करीब 33 साल, निवासी सूरजपोल, सेठजी का चौक, बूंदी।

----अपीलार्थी

बनाम

1. राजस्थान सरकार को सचिव, माध्यमिक शिक्षा, जयपुर राजस्थान राज्य के माध्यम से।
2. निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, शिक्षा विभाग, बीकानेर।
3. सुश्री गायत्री विजय, उप. निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, कोटा।

----प्रत्यर्थी

अपीलार्थी के लिए	:	श्री कमलाकर शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मोलिक पुरोहित के साथ
प्रत्यर्थी के लिए	:	श्री एस.एस. राघव, एएजी श्री मनंजय सिंह राठौड़ के साथ

माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

आदेश

आदेश आरक्षित करने की तारीख	::	03.10.2023
उच्चारित करने की तारीख	::	17.10.2023

रिपोर्टेबल

1. अपीलार्थी द्वारा दिनांक 11.07.2007 के उस आदेश को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।
2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का उपयोग करते हुए, अपीलार्थी ने निम्नलिखित प्रार्थना के साथ यह याचिका दायर

की है:-

"(i) रिट या सर्टिरीरी या किसी अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या उसकी प्रकृति में निर्देश जारी करके, प्रतिवादी नंबर 3 द्वारा पारित 11 जुलाई, 2007 के आदेश को रद्द कर दिया जाए और उसे शुरू से ही शून्य घोषित किया जाए और प्रत्यर्थियों को निर्देशित किया जाए। अपीलार्थी को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में वापस लेना;

(ii) परमादेश की रिट या उसकी प्रकृति में कोई अन्य उचित रिट, आदेश या निर्देश जारी करके, एक उचित निर्देश जारी किया जा सकता है ताकि प्रतिवादी नंबर 3 के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई की जा सके क्योंकि उसने जानबूझकर दुर्भावनापूर्ण और बदले की भावना से काम किया है। अपीलार्थी के खिलाफ और उसे आजीविका के अधिकार से वंचित कर दिया।

(iii) प्रार्थना के अनुसार अंतरिम राहत दी जाए।

(iv) कोई अन्य आदेश या निर्देश जिसे यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित और उचित समझता है, वह भी अपीलार्थी के पक्ष में पारित किया जा सकता है।

<u>अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुतियाँ</u>

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि अपीलार्थी ने वर्ष 1998 में जारी विज्ञापन के अनुसार शारीरिक शिक्षा शिक्षक ग्रेड-II के पद पर नियुक्ति के लिए चयन में भाग लिया था। प्रारंभ में, अपीलार्थी के पास मौजूद डिग्री को प्रत्यर्थियों द्वारा विज्ञापित पद पर नियुक्ति पाने के लिए डिग्री वैध नहीं माना गया था। अधिवक्ता का कहना है कि अपीलार्थी ने एस.बी. दायर करके इस न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थियों की उपरोक्त कार्रवाई को सिविल रिट याचिका संख्या 3023/2004 द्वारा चुनौती दी है और इस न्यायालय द्वारा दिनांक 18.11.2005 के आदेश द्वारा इसकी अनुमति दी गई थी और अपीलार्थी की योग्यता का पुनर्मूल्यांकन करने और राज्य स्तर के प्रमाणपत्र के बोनस अंकों को ध्यान में रखने के लिए प्रत्यर्थियों को एक विशिष्ट निर्देश जारी किया गया था और मामले में अपीलार्थी योग्यता में पाया जाता है तो उक्त पद पर नियुक्ति के लिए उसके मामले पर विचार करें। अधिवक्ता का कहना है कि उपरोक्त आदेश पारित होने के बाद, अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत

दस्तावेजों/खेल प्रमाणपत्र को प्रत्यर्थियों द्वारा विधिवत सत्यापित किया गया और दिनांक 31.10.2006 के आदेश के तहत उसे नियुक्ति प्रदान की गई। अधिवक्ता का कहना है कि एक ठीक सुबह अर्थात 14.02.2007 को, अपीलार्थी की सेवाओं को प्रत्यर्थियों द्वारा यह निष्कर्ष दर्ज करके खारिज कर दिया गया था कि अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत खेल प्रमाणपत्र जाली और मनगढ़ंत पाया गया था। अधिवक्ता का कहना है कि अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष संख्या 20/07 का एक विविध आवेदन प्रस्तुत किया गया था, जिसमें इस न्यायालय द्वारा यह देखा गया था कि अपीलार्थी के खेल प्रमाणपत्रों के संबंध में अलग से जांच करने का प्रश्न विविध आवेदन में तय नहीं किया जा सकता है और इसे अपीलार्थी के लिए इस न्यायालय के समक्ष अलग से चुनौती देने के लिए खुला छोड़ दिया गया था। लेकिन बाद में 14.02.2007 के बर्खास्तगी आदेश को प्रत्यर्थियों ने 18.05.2007 के आदेश के जरिए वापस ले लिया, बशर्ते कि अपीलार्थी के खिलाफ एक अलग जांच की जाए। अधिवक्ता का कहना है कि इस बीच अपीलार्थी के खिलाफ धारा 420, 467, 468 और 471 आईपीसी के तहत दंडनीय अपराध के लिए पुलिस स्टेशन कैथून पोल जिला कोटा में एफआईआर संख्या 27/2007 दर्ज की गई थी, लेकिन बिना कोई नोटिस जारी किए और बिना कोई जांच किए। राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1958 (संक्षेप में '1958 के नियम') में निहित प्रावधानों के तहत, प्रत्यर्थियों ने दिनांक 11.07.2007 के आदेश के तहत अपीलार्थी की सेवा को फिर से यह मानते हुए खारिज कर दिया है कि खेल अपीलार्थी का प्रमाणपत्र जाली और मनगढ़ंत पाया गया। प्रत्यर्थियों ने वर्ष 2006 में प्राधिकरण द्वारा जारी पत्रों के आधार पर अपीलार्थी की सेवाओं को खारिज कर दिया है। अधिवक्ता का कहना है कि बाद में उक्त आपराधिक मामले में, अपीलार्थी को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कोटा की अदालत द्वारा दिनांक 26.08.2021 के निर्णय द्वारा सभी आरोपों से बरी कर दिया गया था। अधिवक्ता का कहना है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हुए अपीलार्थी के खिलाफ गलत इरादे से आदेश पारित किया गया है। अधिवक्ता ने इस न्यायालय द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों/आदेशों पर भरोसा जताया है:-

(1) छोगा लाल बनाम राजस्थान जनजाति क्षेत्रीय विकास सहकारी संघ, उदयपुर एवं अन्य एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 877/1996 पर 21.08.2009 को निर्णित।

(2) छोटूलाल बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 5725/1995 पर 02.07.2009 को निर्णित।

(3) शिव प्रसाद शर्मा बनाम. राजस्थान राज्य और अन्य 2003(3) डब्लूएलएन 129।

अतः, इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक है।

<u>प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुतियाँ:</u>

4. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य के अधिवक्ता ने अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि फर्जी और मनगढ़ंत दस्तावेजों के आधार पर, अपीलार्थी को नियुक्ति मिली है और जब इस तथ्य को सक्षम प्राधिकारी द्वारा सत्यापित किया गया तो यह पाया गया कि अपीलार्थी के पास असली खेल प्रमाणपत्र नहीं था। अधिवक्ता का कहना है कि पूछताछ के दौरान अपीलार्थी द्वारा 08.01.2007 को एक लिखित बयान प्रस्तुत किया गया था जिसमें अपीलार्थी ने स्वीकार किया है कि उसने कभी भी राज्य स्तरीय खेल प्रतियोगिता में भाग नहीं लिया है। अधिवक्ता का कहना है कि इन परिस्थितियों में, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का विधिवत पालन किया गया और तदनुसार आदेश पारित किया गया है जिसके द्वारा अपीलार्थी की सेवाओं को खारिज कर दिया गया है। अधिवक्ता का कहना है कि इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का हस्तक्षेप उचित नहीं है।

5. बार में की गई दलीलों को सुना और उन पर विचार किया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

<u>विश्लेषण और तर्क:</u>

6. यह पता लगाने के लिए कि लागू किए जाने वाले परीक्षण विभागीय जांच प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार की गई थी और क्या अपराधी को उचित अवसर दिया गया था या नहीं, इस प्रकार हैं:-

(i) क्या निश्चित आरोप तय करके और जिन आरोपों पर आरोप आधारित थे, उनका प्रकटन करके अपराध को नकारने और अपनी बेगुनाही साबित करने का अवसर दिया गया था?

(ii) क्या उसके खिलाफ पेश किए गए और उसकी उपस्थिति में जांचे गए गवाहों से जिरह करके अपना बचाव करने और अपने बचाव के समर्थन में खुद को या किसी अन्य गवाह से पूछताछ करने का अवसर दिया गया था?

(iii) क्या जांच में अपराधी के विरुद्ध स्पष्टीकरण का अवसर दिए बिना किसी सामग्री पर भरोसा किया गया था?

(iv) क्या उसे यह बताने का अवसर दिया गया था कि उसे प्रस्तावित सज़ा क्यों नहीं दी जानी चाहिए?

7. उचित अवसर क्या है, इसे भारत के संविधान या सामान्य खंड अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है। लेकिन शब्दों ने कानूनी अर्थ प्राप्त कर लिया है और इसे प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा पर नहीं छोड़ा जा सकता है। अतः 'उचित' शब्द का अर्थ प्राकृतिक न्याय के नियमों के अनुसार होना चाहिए जो कानून के नियम हैं। जहां किसी व्यक्ति के खिलाफ आदेश दिया जाना है तो प्राधिकारी का यह कर्तव्य बन जाता है कि वह न्यायिक तरीके से सुनवाई करे, अर्थात वस्तुनिष्ठ तरीके से, निष्पक्ष तरीके से और संबंधित व्यक्ति को अपना मामला उसके सामने रखने का उचित अवसर दे। किसी व्यक्ति को सुनवाई का अवसर दिए बिना उस आदेश को पारित करना जो किसी व्यक्ति को प्रभावित करता है, उसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत माना जाएगा। यदि संविधान के अनुच्छेद 311 द्वारा प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों को भ्रामक नहीं बनाया जाना है, तो "उचित अवसर" शब्द का अर्थ वास्तविक और पर्याप्त अवसर माना जाना चाहिए जो केवल नाममात्र या शर्मनाक नहीं है। कानून का यह सुस्थापित सिद्धांत है कि सेवा से हटाने का आदेश जिसने व्यक्ति को संविधान के अनुच्छेद 311 (2) द्वारा प्रदान की गई सुरक्षा की उपेक्षा करते हुए खुद का बचाव करने के उचित अवसर से वंचित कर दिया, कानून की नजर में अमान्य और अस्तित्वहीन है। अपराधी अधिकारी की पीठ पीछे दर्ज किए गए बयानों के आधार पर जांच अधिकारी और अनुशासनात्मक प्राधिकारी के निष्कर्ष उचित अवसर से इनकार के आधार पर ख़राब हो जाते हैं।

8. दिनांक 11.07.2007 के आक्षेपित आदेश को ध्यान से देखने पर पता चलता है कि अपीलार्थी को कोई नोटिस या आरोप-पत्र नहीं दिया गया था। अपीलार्थी को यह स्पष्टीकरण मांगने के लिए कोई दस्तावेज नहीं दिया गया कि उसके द्वारा दिए गए खेल प्रमाणपत्र नकली और मनगढ़ंत थे। अपीलार्थी को अपने ऊपर लगे आरोपों पर जवाब दाखिल करने का कोई अवसर नहीं दिया गया।

9. मामले की पृष्ठभूमि से पता चलता है कि अपीलार्थी को दिनांक 01.09.2006 के आदेश के माध्यम से नियुक्ति दी गई थी और उसे दिनांक 14.02.2007 के आदेश के माध्यम से

इस आधार पर सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था कि उसने जाली खेल प्रमाणपत्रों के आधार पर नियुक्ति प्राप्त की थी। इन तथ्यों को एस.बी.सिविल विविध आवेदन क्रमांक 20/2007 दायर करके इस न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था। हालाँकि, उक्त आवेदन पर इस न्यायालय द्वारा 25.05.2007 को निर्णय लिया गया था, जिसमें प्रत्यर्थियों को अपीलार्थी के खेल प्रमाणपत्रों के संबंध में अलग से जांच करने की स्वतंत्रता दी गई थी। अतः, 18.05.2007 को, प्रत्यर्थियों ने बर्खास्तगी आदेश दिनांक 14.02.2007 वापस ले लिया और अपीलार्थी के खेल प्रमाणपत्रों के संबंध में जांच करने के अधीन अपीलार्थी की नियुक्ति बहाल कर दी।

10. प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी के खिलाफ 13.03.2007 को धारा 420, 467, 468 और 471 आईपीसी के तहत पुलिस स्टेशन कैथूनी पोल जिला कोटा में एफआईआर संख्या 27/2007 दर्ज की, जिसमें अपीलार्थी पर सक्षम न्यायालय के समक्ष उपरोक्त अपराधों के लिए आरोप लगाया गया था।

11. इस बीच, प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी के खेल प्रमाणपत्रों की वास्तविकता को सत्यापित करने के लिए अधिकारियों को पत्र लिखा और इसे मनगढ़ंत पाया और यह पाया गया कि अपीलार्थी ने इन खेल आयोजनों में भाग नहीं लिया था। प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी के दिनांक 08.01.2007 के एक लिखित बयान पर भरोसा किया है जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि अपीलार्थी ने स्वीकार किया है कि उसने खेल प्रतियोगिता में भाग नहीं लिया था और अपीलार्थी को सेवा से बर्खास्त करने का निर्णय लिया गया था।

12. यहां यह ध्यान देने योग्य है कि आक्षेपित बर्खास्तगी आदेश पारित करने से पहले, प्रत्यर्थियों द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं मांगा गया था, उन्हें आरोप-पत्र का कोई नोटिस नहीं दिया गया था और उनके खिलाफ कोई जांच नहीं की गई थी, उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों का खंडन करने का कोई अवसर नहीं दिया गया था।

13. जब इस याचिका में दिए गए आदेश को स्कैन किया जाता है और उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में और लागू करके, पर्दा हटाए बिना भी विचार किया जाता है, तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आदेश कलंक लगाता है। यह आदेश स्पष्ट रूप से अपीलार्थी की सेवा समाप्त करने के लिए की गई कलंकात्मक कार्रवाई थी। अपीलार्थी को बचाव के लिए सुनवाई का पूरा अवसर दिए बिना और नियमित विभागीय जांच के बाद ऐसी कार्रवाई नहीं

की जा सकती थी। नियोक्ता को नौकरी पर रखने और नौकरी से निकालने की अनुमति नहीं है, भले ही कर्मचारी के खिलाफ किसी कदाचार के संबंध में आरोप हों। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार नियमित जांच किए बिना, कदाचार के आधार पर कलंक लगाकर सेवाओं को कलम के एक झटके से खारिज नहीं किया जा सकता है।

14. बर्खास्तगी के प्रभाव को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **श्याम लाल बनाम यूपी राज्य, एआईआर 1954 एससी 369** में रिपोर्टित के मामले में समझाया गया है। जिसमें न्यायमूर्ति ने अभिनिर्धारित किया है कि इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि निष्कासन का आम तौर पर तात्पर्य यह है कि अधिकारी को किसी तरह से दोषपूर्ण माना जाता है, अर्थात वह कदाचार का दोषी है या उसमें अपने अपेक्षित कर्तव्यों का निर्वहन करने की योग्यता या क्षमता या इच्छाशक्ति की कमी है। ऐसी परिस्थितियों में उसके खिलाफ की गई निष्कासन की कार्रवाई अधिकारी के कुछ व्यक्तिगत आधार पर आधारित और उचित है। आगे यह माना गया है कि बर्खास्तगी या निष्कासन एक सजा है और यह अधिकारी पर दंड के रूप में लगाया जाता है। इसमें पहले से अर्जित लाभ की हानि शामिल है।

15. इस स्तर पर, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत सरकारी कर्मचारी को दी गई सुरक्षा और संरक्षण की गारंटी पर ध्यान देना उचित होगा, जो निम्नानुसार प्रदान करता है:-

> **"311. संघ या राज्य के अधीन नागरिक क्षमताओं में कार्यरत व्यक्तियों की बर्खास्तगी, निष्कासन या रैंक में कमी** - (1) **XXX XXX XXX**
>
> (2) उपरोक्त किसी भी व्यक्ति को उस जांच के अलावा बर्खास्त या हटाया या रैंक में कम नहीं किया जाएगा, जिसमें उसे उसके खिलाफ आरोपों के बारे में सूचित किया गया हो और उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का उचित अवसर दिया गया हो।:
>
> बशर्ते कि जहां ऐसी जांच के बाद उस पर ऐसा कोई जुर्माना लगाने का प्रस्ताव हो, ऐसा जुर्माना ऐसी जांच के दौरान पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर लगाया जा सकता है और ऐसे व्यक्ति को प्रस्तावित जुर्माने पर अभ्यावेदन करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा।
>
> बशर्ते कि यह खंड निम्नलिखित पर लागू नहीं होगा -

(क) जहां किसी व्यक्ति को आपराधिक आरोप में दोषी ठहराए गए कारण से आचरण के आधार पर बर्खास्त किया जाता है या हटा दिया जाता है या पद से कम कर दिया जाता है; या

(ख) जहां किसी व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या उसे रैंक में कम करने पर अधिकारप्राप्त प्राधिकारी संतुष्ट है कि किसी कारण से, उस प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने पर, ऐसी जांच करना उचित रूप से व्यावहारिक नहीं है; या

(ग) जहां राष्ट्रपति या राज्यपाल, जैसा भी मामला हो, संतुष्ट हैं कि राज्य की सुरक्षा के हित में ऐसी जांच कराना समीचीन नहीं है।

16. अनुच्छेद 311 का उद्देश्य मूल रूप से सरकारी कर्मचारियों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान करना है और संघ और राज्यों के तहत नागरिक क्षमताओं में कार्यरत व्यक्तियों को मनमाने ढंग से बर्खास्तगी, निष्कासन और रैंक में कमी के खिलाफ संवैधानिक सुरक्षा की गारंटी देता है। दोहरी

(क) जिस प्राधिकारी द्वारा कर्मचारी नियुक्त किया गया था उसके अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा निष्कासन या बर्खास्तगी के विरुद्ध, और

(ख) प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किए बिना कर्मचारी को जांच में सुनवाई का उचित अवसर दिए बिना बर्खास्तगी, निष्कासन और रैंक में कटौती के खिलाफ।

17. भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) द्वारा विचारित जांच को आम तौर पर विभागीय जांच के रूप में जाना जाता है और अनुच्छेद 311(2) के अर्थ के भीतर एक उचित जांच के लिए संवैधानिक आवश्यकता मूल रूप से दो प्रकार की होती है।–

(i) सिविल कर्मचारी को उसके खिलाफ आरोपों के बारे में सूचित किया जाना चाहिए, और
(ii) उन्हें उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का उचित अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

18. भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत प्रयुक्त "खारिज" और "हटाए गए" शब्दों का दायरा **मोती राम ढेका बनाम महाप्रबंधक, उत्तर ईस्टर फ्रंटियर रेलवे** ने **एआईआर 1964 एससी 600** में रिपोर्टित के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष विचार के लिए आया था। जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी को उसके कार्यालय से बर्खास्त करने या हटाने का प्रभाव उसे उस कार्यालय से बर्खास्त करना

है अर्थात सेवा समाप्त करना है। इस प्रकार, उक्त शब्द एक सरकारी कर्मचारी की सेवा की प्रत्येक समाप्ति को समझते हैं। अतः अनुच्छेद 311(2) में यह कहा गया है कि किसी सरकारी कर्मचारी की सेवाएं समाप्त करने से पहले, उसे ऐसी समाप्ति के खिलाफ कारण बताने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए। माननीय न्यायमूर्ति ने आगे अभिनिर्धारित किया कि उक्त अभिव्यक्ति पर कोई सीमा लगाने का कोई निर्णय नहीं है। उक्त सीमा को लागू करने का प्रयास न तो अनुच्छेद में प्रयुक्त अभिव्यक्तियों या दिए गए कारण से उचित है। यदि ऐसी सीमाएं लागू की जाती हैं, तो इससे एक असाधारण परिणाम होगा कि एक सरकारी कर्मचारी, जो कदाचार का दोषी है, उचित अवसर का पात्र होगा, जबकि एक ईमानदार सरकारी कर्मचारी को ऐसी किसी सुरक्षा के बिना बर्खास्त किया जा सकता है। किसी स्थायी पद पर वास्तविक ग्रहणाधिकार रखने वाले सरकारी कर्मचारी को उचित अवसर दिए बिना उक्त पद से नहीं हटाया जा सकता है, जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के तहत माना है। अतः यह स्पष्ट है कि किसी सरकारी कर्मचारी के पद पर बने रहने के अधिकार में साधारण रूप से हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, यदि ऐसी कोई कार्यवाही करने की आवश्यकता होती है, तो सरकार द्वारा आवश्यक देखभाल और सावधानी सुनिश्चित की जानी चाहिए, ताकि हितों की रक्षा की जा सके। एक सरकारी कर्मचारी की, जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत माना गया है। इसे पैराग्राफ 67 और 68 में निम्नानुसार देखा गया है:-

> "67. अतः, चाहे "बर्खास्तगी" और "निष्कासन" शब्दों के प्राकृतिक और शब्दकोश अर्थ को अपनाया गया या आर. 49 द्वारा उन शब्दों को दिए गए सीमित अर्थों को स्वीकार किया गया, परिणाम, जहां तक एक स्थायी कर्मचारी का संबंध है, वही होगा अर्थात्, स्पष्टीकरण में उल्लिखित तीन श्रेणियों के बाहर किसी सरकारी कर्मचारी की सेवाओं की समाप्ति के मामले में, यह संविधान के अनुच्छेद 311 के अर्थ के तहत बर्खास्तगी या निष्कासन होगा। इस अंतर के साथ कि पूर्ववर्ती बर्खास्त कर्मचारी को भावी रोजगार के लिए अयोग्य नहीं ठहराया जाएगा और परवर्ती को आम तौर पर ऐसे रोजगार के लिए अयोग्य ठहराया जाएगा।
>
> 68. यदि ऐसा है, तो यह इस प्रकार है कि यदि किसी स्थायी कर्मचारी की सेवाएं, जो स्पष्टीकरण में उल्लिखित तीन श्रेणियों से बाहर हैं, समाप्त

कर दी गईं, तो वह संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के तहत सुरक्षा का पात्र होगा।

19. अपीलार्थी एक स्थायी सरकारी कर्मचारी था। उसे अपने मूल पद पर अधिकार था। **एआईआर 1958 एससी 36 में रिपोर्ट किए गए परषोतम लाल ढींगरा बनाम भारत संघ** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे कर्मचारी की सेवा समाप्त करना, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) को प्रवत्त करते हुए सेवा से उसे 'हटाना' या 'बर्खास्तगी' माना जाएगा। इस प्रकार, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत निहित प्रावधानों का पालन किए बिना अनुच्छेद 311(2) के तहत गारंटीकृत संवैधानिक संरक्षण और सुरक्षा को किसी भी तरह से दूर नहीं किया जा सकता है।

20. एआईआर 1966 जय शंकर बनाम राजस्थान राज्य, एससी 492 में रिपोर्टित मामले में, सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष विचार के लिए जो प्रश्न आया, वह यह था कि क्या जोधपुर सेवा विनियम के तहत निहित प्रावधान सरकार को सक्षम बनाने के लिए पर्याप्त थे कि किसी व्यक्ति को उस सज़ा, यदि कोई हो, के विरुद्ध कारण बताने का अवसर दिए बिना सेवा से हटा दें, और यह नकारात्मक उत्तर दिया गया था कि विनियमन में किसी की छुट्टी से अधिक समय तक रुकने के लिए सज़ा शामिल है और यह दिखा कर बहाल करने के लिए पदधारी पर बोझ डाला गया है और सरकार किसी व्यक्ति को कम से कम यह कारण बताए बिना कि वे उसे हटाने का प्रस्ताव कर रहे हैं और उसे यह कारण दिखाने का अवसर दिए बिना कि उसे क्यों नहीं हटाया जाना चाहिए, सेवा से बर्खास्त करने का आदेश नहीं दे सकती। इसे आगे इस प्रकार देखा गया है:-

> "6....निष्कासन, निष्कासन है और यदि यह किसी की छुट्टी से अधिक समय तक रुकने की सजा है तो उस व्यक्ति को एक अवसर दिया जाना चाहिए जिसके खिलाफ ऐसा आदेश प्रस्तावित है, चाहे विनियमन इसका वर्णन कैसे भी करे। कोई मौका न देना अनुच्छेद 311 के खिलाफ जाना है और यहां यही हुआ है।'
>
> 7. हमारे फैसले में, जय शंकर अपनी छुट्टी से अधिक रहने पर सेवा से प्रस्तावित निष्कासन के खिलाफ कारण बताने का अवसर पाने के पात्र थे और चूंकि उन्हें ऐसा कोई अवसर नहीं दिया गया था, अत: सेवा से उनका निष्कासन अवैध था। वह इस घोषणा के पात्र हैं।"

21. इसी प्रकार, **(1971) 2 एससीसी 330** में रिपोर्ट किए गए **देवकीनंदन प्रसाद बनाम बिहार राज्य** के मामले में, उच्चतम न्यायालय की एक अन्य संविधान पीठ ने नौकर के कारण बिहार सेवा संहिता के नियम 76 के तहत सेवा समाप्ति का आदेश पारित किया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत नौकर को बिना अवसर दिये पांच वर्ष तक लगातार अनुपस्थित रहना अमान्य होगा।

22. जय शंकर (सुप्रा) और **देवकीनंदन प्रसाद (सुप्रा)** में निर्धारित कानून के उपरोक्त सिद्धांतों का **असम राज्य बनाम अक्षय कुमार देब (1975) 4 एससीसी 399** में रिपोर्टित के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की पीठ द्वारा अनुमोदन के साथ पालन किया गया है। निम्नलिखित प्रश्न पर विचार की आवश्यकता थी:-

> "7. निर्धारण के लिए एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) में निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना, प्रतिवादी की सेवाओं को असम मौलिक और सहायक नियमों के नियम 18 के तहत समाप्त किया जा सकता है?

23. जय शंकर (सुप्रा), **देवकीनंदन प्रसाद (सुप्रा)** और **अक्षय कुमार देब (सुप्रा)** के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों के आलोक में वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर मुड़ते हुए, यह काफी स्पष्ट है कि अपीलार्थी एक स्थायी सरकारी कर्मचारी है और उसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के तहत संवैधानिक सुरक्षा और संरक्षण प्राप्त है, अत: प्रत्यर्थियों के लिए उसे सेवा से अपनी प्रस्तावित बर्खास्तगी का बचाव करने का अवसर देना नितांत आवश्यक था। लेकिन ऐसा किए बिना, प्रतिवादियों ने अपीलार्थी के खिलाफ कोई जांच किए बिना उसकी सेवाएं समाप्त कर दी हैं।

<u>निष्कर्ष:</u>

24. ऊपर देखे गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। दिनांक 11.07.2007 के आदेश को रद्द किया जाता है और अपीलार्थी को सेवा में वापस बहाल करने के निर्देश के साथ रद्द किया जाता है। प्रत्यर्थियों को कानून के अनुसार अपीलार्थी के खिलाफ नई जांच करने की स्वतंत्रता दी गई है। हालाँकि, ऐसी जाँच इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर समाप्त की जाएगी।

25. स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन (लंबित, यदि कोई हो) का भी निपटारा किया जाता है।

26. हालाँकि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(अनूप कुमार ढांड), न्यायमूर्ति

एमआर/पीसीजी/280

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।